Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मेघदूत में प्रयुक्त दार्शनिक तत्त्व

डॉ. गरिमा शर्मा *

*** सहायक आचार्य (विद्या संबल योजना के तहत), राजकीय कन्या महाविद्यालय, राजसमन्द (राज.) भारत**

प्रस्तावना – देववाणी के सनातन श्रृंगार महाकवि कालिदास संस्कृत वाङ्मय के रससिद्ध कवीश्वर हैं। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का प्रधान संवाहक होता है, अतएव साहित्य में किसी भी देश की संस्कृति का प्रतिबिम्ब होना नितान्त स्वाभाविक है। संस्कृति के समुचित प्रसार एवं प्रचार के दृष्टिकोण से महाकवि का समग्र काव्य अखण्ड शिव सन्देश है। लोक कल्याण एवं राष्ट्रमंगल की मधुमय पयस्विनी प्रवाहित करने वाले ऐसे महान क्रान्तदर्शी मनीषी कवि की कृतियों में संस्कृति के प्राणभूत आध्यात्मिक तत्त्वों का सागर है। 'दर्शन' भारतीय मनीषियों की आत्मनिधि है, महामनीषी कालिदास का काव्य भी तत्त्वपर्येषणा से युक्त है।

'काव्य' और 'दर्शन' दोनों ही जीवन के चरमलक्ष्य आनन्दानुभूति की प्रतिपत्ति में पर्यवसित दृष्टिगोचर होते हैं, क्योंकि जीवन में दु:ख-सुख का अबाध नेमिचक्र और विश्व की अत्यन्त विषमता मनुष्यमात्र को विश्व के मूल सत्य की पर्येषणा के लिए अभिप्रेरित करती है।

'कविर्मनीषीपरिभू: स्वयम्भू:'[1] की चरितार्थता भी इसी में निहित है कि क्रान्तदर्शी कवि न होकर केवल सहृदयजनों के रंजनार्थ, प्रत्युत लोककल्याण की मंगलभावना से भावित होकर भी काव्य की सृष्टि करे और उसकी यह मंगलकामना ऐहिक – अभ्युदय एवं आमुष्मिक नि:श्रेयस् का मूलाधार बने।

यद्यपि महाकवि कालिदास की कृतियों में समुपलब्ध दार्शनिक तत्त्वों का विश्लेषणात्मक विवरण सर्वाधिक रघुवंशम् व कुमारसम्भवम् में ही किया गया है तथापि 'मेघदूतम्' खण्डकाव्य में भी दर्शनशास्त्र की कतिपय अवधारणाओं / अंगों का विवेचन किया गया है।

मेघदूत में आए दार्शनिक तत्त्वों का विवरण इस प्रकार है-

प्रमाण मीमांसा → अनुमान प्रमाण

महाकवि कालिदास ने अनुमान प्रमाण के सम्बन्ध में 'मेघदूत' खण्डकाव्य के 'उत्तरमेघ' में अनुमान शब्द का प्रयोग किया है। अनुमान शब्द का प्रयोग करते समय 'तर्क' व 'शङ्के'पद का व्यवहार किया है। शास्त्रों में अनुमान विद्या के लिए 'तर्क' शब्द का प्रयोग किया जाता है। यतर्क' शब्द का प्रयोग पर्याप्त प्राचीन है।[2]

महाकवि कालिदास को स्वार्थानुमान तथा परार्थानुमान के भेद से अनुमान प्रमाण का द्वैविधय मान्य है। अपने ज्ञान का निमित्त जो अनुमान है, वह स्वार्थानुमान है तथा जब कोई स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके दूसरे को उसका बोध कराने के लिए पंचावयवसम्पन्न अनुमान का प्रयोग करता है, वह परार्थानुमान है।

कवि ने 'उत्तरमेघ' में शाप के कारण विरहि नायिका की तुलना पाले की मारी कमलिनी की तरह की है।[3]

कविकृत इस श्लोक में पंचावयव सम्पन्न परार्थानुमान का स्पष्ट रूप से निर्धारण एवंविधा किया जा सकता है।

नायक (साध्य)
शाप के दुर्वह दिवस (हेतु)
जब-जब सूर्य की किरणों से विकसित
होना- अर्थात् कमलिनी (अन्वयव्याप्ति)
जब-जब पाले की मार पड़ने से
कमलिनी का मुर्झा जाना (व्यतिरेकव्याप्ति)
नायकी नायक का प्राण है। (उपनय)
नायकी नायक का प्राण नहीं है। (निगमन)

इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने उत्तारमेघ में नायक (यक्ष) के माधयम से नायिका(यक्षिणी) की मनोव्यथा को अनुमान प्रमाण के द्वारा ही ज्ञात किया है।[4] अनुमान प्रमाण के लिए 'शङ्के' पद का प्रयोग दृष्टिगत है।

श्लोक में नायक (यक्ष) के द्वारा अभूतपूर्व वियोग के कारण यक्षिणी की दीन-दशादि का मेघ के समक्ष अनुमान किया गया है।

प्रत्यक्ष प्रमाण का स्वरूप – कालिदास ने प्रमाण के रूप में अन्त:करण की वृत्ति का उल्लेख किया है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार-इन चार वृत्तिरूपों में विभाजित मन को ही 'अन्त:करण' संज्ञा दी जाती है। अन्त:करण अज्ञानजन्य होने के कारण जड़ – स्वभाव है, इसलिए, चिदात्मा के प्रतिबिम्ब के कारण उसमें क्रियाशीलता आती है। चिति का यह प्रतिबिम्ब जब सत्त्वबहुला (प्रसन्न) बुद्धि में पड़ता है। तभी बुद्धि चितिच्छायापन्न होकर सचेष्ट हुआ करती है।

'गम्भीराया: पर्यासं सरितश्चेतसीव प्रसन्ने।
छायात्माडिप प्रकृतिसुभगो लप्स्येते ते प्रवेशम्।।'

अन्त:करण की शुद्धता – हे सज्जन। बान्धव – स्नेह के कारण युद्ध से विरत बलराम ने अपनी इच्छित स्वादवाली अपनी प्रिया के नेत्रों के प्रतिबिम्ब से चिह्नत मदिरा को छोड़कर जिस सरस्वती के जल का सेवन किया था। तुम भी उस जल का सेवन (पान) करके निर्मल अन्त:करण वाले होकर केवल रूप से (न कि हृदय से भी) श्यामरंग के हो जाओगे पवित्र स्थलों और पवित्र नदियों के सम्पर्क से भी अन्त:करण की पवित्रता आती है।

'हित्वा हालामभिमतरसां रेवतीलोचनाङ् कां
बन्धुप्रीत्या समर-विमुखो लाङ्गली या: सिषेवे।
कृत्वा तासामनिगममपां सौम्य सारस्वतीना-

मन्त: शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्ण:।।'[6]

परमतत्त्व की संधारणा

'पुण्यं यायस्त्रिभुवनगुरोधचण्डीश्वरस्य।'

(शिव ही त्रिभुवन के गुरू हैं)

परतत्त्व विवेचन के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि कालिदास को अद्वैत अभीष्ट है। महेश्वर (शिव) के रूप में इस अद्वय तत्त्व का ग्रहण उन्होंने किया है।

वेदान्त श्रुति में जिसे एकमेवाद्वितीयम् के रूप में कहा गया है जो द्यावा पृथ्वी को व्याप्त किए हैं वह जिस एक मात्र को लक्ष्य करके प्रवर्तित ईश्वर शब्द सार्थक है वही तत्त्व ही शिव शब्द से अभिहित है।

मोक्ष तत्त्व – अपने-अपने पुण्य फल से जीव आनन्दमय मोक्षप्राप्त होता है। पुण्यों की अवस्था के अनुसार मार्ग के अनेक लोकों की कल्पना भारतीय दार्शनिक एवं पौराणिक परम्परा में है। इसी दृष्टि से पुण्य-क्षय से पृथ्वी लौट आना भी मान्य रहा है।

'स्वल्पीभूतं सुचरि स्वर्गिणां गां गतानां ।

शैषै: पुण्यै र्हृतमिव दिव: कान्तिमत्खण्डमेकम्'[7]

पवित्र स्थलों और पवित्र नदियों के सम्पर्क से भी अन्त:करण की पवित्रता आती है।

'हित्वा..... .कृष्णा'[8]

पाप से मुक्ति तस्माद्..... .र्मिहस्ता।[9]

कर्म-मीमांसा : कालिदास ने 'मेघदूत' खण्डकाव्य में जीवन में सुख-दु:ख दोनों प्रकार के भोगों का अवश्यसम्भावित्व प्रतिपादन करते हुए कर्मविपाक सिद्धान्त की इस धारणा को सुस्पष्ट करने की चेष्टा की है कि सभी प्रकार के कर्म काम, क्रोध, लोभ, मोह की भावना से ही किए जाते हैं। किसी प्राणी के प्रति किया गया उपकार अन्य किसी के प्रति अपकार रूप हो सकता है, इसलिए एक ही कर्म से शुभ तथा अशुभ दो संस्कार बनते हैं । प्रत्येक प्राणी को कर्मजन्य शुभाशुभ संस्कारों के कारण ही सुख-दु:ख दोनों ही प्रकार के भोग भोगने पड़ते हैं। मेघदूत में यह संकेत प्राप्त होता है कि सारे कर्म अविद्यादि पंचक्लेशपूर्वक किए जाने के कारण ही कर्माशयों को उत्पन्न करते हैं और उन कर्माशयों का फल जन्म, जीवनावंधि तथा सुख-दु:ख भोग रूप ही होता है।

कस्यैकान्तं.....चक्रेनेमिक्रमेण ।।[10]

निष्कर्ष : निष्कर्षतया कहा जा सकता है कि काव्य के आत्मभूत रसानुभूति को अबाध रखते हुए भी दार्शनिक विचारों की स्फुट अभिव्यक्ति करना महाकवि की ही विलक्षण काव्य प्रतिभा का नैसर्गिक वैशिष्ट्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ईशा. उ. 8
2. 'नैषा तर्केण मतिरापनेया। कठ. उ. 1/2/9 यस्तर्केण अनुसन्धत्तो स धर्म वेद नेतर:। मनु. 12 / 106 तर्काप्रतिष्ठानात्।सू.2/1/11
3. तां जानीथा: परिमितकथां जीवितं में द्वितीयं । दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकी मिवैकाम्। उत्तरमेघ 2.0 गाढोत्कण्ठां गुरूषु दिवसेष्वेषु गच्छत्सु बालां । जातां मन्ये शिशिरमथितां पद्मिनीं वान्यरूपाम्।
4. सव्यापारामहनि न तथा पीडयेन्मद्वियोग: शङ्के रात्रौ गुरूतरशुचं निविनोदां सखीं ते। मत्सन्देशै: सुखयितुमलं पश्य साधवीं निशीथे। तामुन्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थ: । उत्तरमेघ श्लोक - 25
5. पूर्वमेघ श्लोक - 40
6. पूर्वमेघ श्लोक - 49
7. पूर्वमेघ श्लोक - 36
8. (मे. दू. पूर्व 30)
9. (पूर्व मेघ 49)
10. (पूर्व मेघ 50)
11. उत्तरमेघ श्लोक - 44

****